Regn. No.: DELHIN/2000/2473 Postal Regn. No.: DL-14004/2005

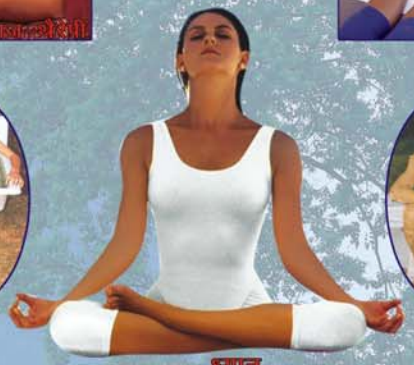

एम. एस. आर. नेचरोपैथी,
योगा एंव आयुर्वेदिक हॉस्पिटल
जैन मंदिर आश्रम, रिंग रोड,
सराय काले खाँ पेट्रोल पम्प के पीछे, नई दिल्ली – 110 013
फोन – 011–26327911, 9213373656

प्रकाशक व मुद्रक : श्री अरूण तिवारी, मानव मंदिर मिशन (रजि.) जैन मंदिर आश्रम, सराय काले खां के सामने रिंग रोड, पो. बो.–3240, नई दिल्ली –13, आई. जी. प्रिन्टर्स 104 (DSIDC) से मुद्रित।
संपादिका : श्रीमति निर्मला पुगलिया

मूल्य 5.00 रूपये अक्टूबर, 2005

रूपरेखा

जीवन मूल्यों की प्रतिनिधि मासिक पत्रिका

पंचइद्रियों के प्रतीक घोड़ों पर संयम की लगाम।

रूपरेखा

जीवन मूल्यों की प्रतिनिधि मासिक पत्रिका

वर्ष : 5 अंक : 10 अक्टुबर, 2005

ekxn'kZu

iiT;k çofrZuh lkèoh eatqyJh th

ijke'kZd

Jh bUæekgu xks;y

lEikndh; eMy

Jherh fueZyk iqxfy;k]
Jherh eatq tSu
Jherh lxhrk cjfM+;k ,oa Jh cyoUr tSu

O;oLFkkid

Jh v:.k frokjh

एक प्रति : 5 रुपये
वार्षिक शुल्क : 60 रुपये
आजीवन शुल्क : 700 रुपये

: प्रकाशक :

मानव मंदिर मिशन ट्रस्ट (रजि.)
पोस्ट बॉक्स नं. : 3240
सराय काले खाँ बस टर्मिनल के सामने नई दिल्ली–110 013
फोन नं. : 26315530, 9312239709
Website: www.manavmandir.com
E-mail : contact@ manavmandir.com

इस अंक में

01–आर्ष वाणी –5
02–बोध कथा –5
03–संपादकीय –6
04–गुरूदेव की कलम से –7
05–सवाल आपके.... –14
06–आध्यात्मिक प्रवचन –16
07–व्यक्ति पर रंगो –21
08–भजन –23
09–स्वास्थ्य... –24
10–बोले–तारे –26
12–समाचार–दर्शन –29
11–संवेदना समाचार –30

: i j[kk& l j{kd x.k

- डॉ. कैलाश सुनीता सिंघवी ,न्यूयार्क
- डॉ. अंजना आशुतोष रस्तोगी, टेक्सास
- श्री केवल आशा जैन, टेम्पल, टेक्सास
- श्री उदयचन्द राजीव डागा, ह्युष्टन
- श्री आलोक ऋतु जैन, ह्युष्टन
- श्री अमृत किरण नाहटा, कनाडा
- श्री गिरीश सुधा मेहता, बोस्टन
- श्री राधेश्याम सावित्री देवी हिसार
- श्री मनसुख भाई तारावेन मेहता, राजकोट
- श्रीमती एवं श्री ओमप्रकाश बंसल, मुक्सर
- डॉ. एस. आर. कांकरिया, मुम्बई
- श्री जयचन्द लाल सेठिया, कलकत्ता
- श्री कमलसिंह–विमलसिंह बैद ,लाडनूं
- श्रीमती स्वराज एरन, सुनाम
- श्रीमती चंपाबाई भंसाली, जोधपुर
- श्रीमती कमलेश रानी गोयल, फरीदाबाद
- श्री जगजोत प्रसाद जैन कागजी, दिल्ली
- डॉ. एस.पी. जैन अलका जैन ,नोएडा
- श्री राजकुमार कांतारानी गर्ग, अहमदगढ़
- श्री प्रेम चंद जिया लाल जैन, उत्तमनगर
- श्री देवराज सरोजबाला, हिसार
- श्री राजेन्द्र कुमार केडिया, हिसार
- श्री धर्मचन्द रवीन्द्र जैन, फतेहाबाद
- श्री रमेश उषा जैन, नोएडा
- श्री गुड्डू, संगरूर
- श्री दयाचंद शशि जैन, नोएडा
- श्री प्रेमचन्द रामनिवास जैन, मुआने वाले
- श्री वीरेन्द्र भाई भारती बेन कोठारी, ह्युष्टन, अमेरिका
- श्री शैलेश उर्वशी पटेल, सिनसिनाटी
- श्री प्रमोद वीणा जवेरी, सिनसिनाटी
- श्री महेन्द्र सिंह सुनील कुमार डागा, बैंकाक
- श्री सुरेश सुरेखा आबड़, शिकागो
- श्री नरसिंहदास विजय कुमार बंसल, लुधियाना
- श्री कृष्ण कुमार सरिता कक्कडिया, लुधियाना
- श्री कालू राम जतन लाल बरड़िया, जयपुर
- श्री अमरनाथ शकुन्तला देवी, अहमदगढ़ वाले, बरेली
- श्री कालूराम गुलाब चन्द बरड़िया, सरदारशहर
- श्री जयचन्द लाल चंपालाल सिंघी, सरदार शहर
- श्री त्रिलोक चन्द नरपत सिंह दूगड़, लाडनूं
- श्री भंवरलाल उम्मेद सिंह शैलेन्द्र सुराना, दिल्ली
- श्रीमती कमला बाई धर्मपत्नी स्व. श्री मांगेराम अग्रवाल, दिल्ली
- श्री धर्मपाल अंजनारानी ओसवाल, लुधियाना
- श्री प्रेमचन्द ओमप्रकाश जैन उत्तमनगर, दिल्ली
- श्रीमती मंगली देवी बुच्चा धर्मपत्नी स्वर्गीय शुभकरण बुच्चा, सूरत
- श्री पी.के. जैन, लॉर्ड महावीरा स्कूल, नोएडा
- श्री द्वारका प्रसाद पतराम, राजली वाले, हिसार
- श्री हरबंसलाल ललित मोहन मित्तल, मोगा, पंजाब
- श्री पुरुषोत्तमदास हरीश कुमार सिंगला, लुधियाना
- श्री विनोद कुमार सुपुत्र श्री बीरबल दास सिंगला, संगरूर
- श्री अशोक कुमार सुनीता चोरड़िया, जयपुर
- श्री सुरेश कुमार विनय कुमार अग्रवाल, चंडीगढ़
- श्री सम्पत राय दस्सानी, कलकत्ता,

आर्ष–वाणी

कसिणं पि जे इमं लोयं, पडिपुण्णं दलेज्ज इक्कस्स

तेणावि से न संतुस्से, इई दुप्पूरए इमे आया

अर्थात् व्यक्ति की इच्छाएं इतनी दुष्पूरक हैं कि सम्पूर्ण संसार की समृद्धि भी अगर एक व्यक्ति को दे दी जाए तो भी वह संतुष्ट नहीं होगा।

○ महावीर वाणी

बोध–कथा

सुख कहां है ?

एक साधनाशील योगी के पास चार व्यक्तियों ने अपने दुखों का पिटारा खोला और कहा, ''हमें इच्छित पदार्थों की प्राप्ति का वरदान दें।

योगी ने कहा–''पदार्थ प्राप्ति सब कुछ नहीं है।'' योगी के कथनोपरांत भी चारों ने योगी से यश, पुत्र, धन और स्त्री की क्रमशः कामना करते हुए वदरान देने का आग्रह किया।

दयालु योगी ने चारों को इच्छित वरदान दिया। समयांतर से वरदान फले और चारों को इच्छित सुख मिले, मगर शांति और भी दूर हो गयी। योगी के पास फिर शिकायतों का पुलिंदा आया।

पूछने पर उन्होंने कहा–''बाबा! यश की प्रतिस्पर्धा ने जीवन को बेबश बना दिया, पुत्र की स्वच्छंदता ने प्रतिष्ठा को मिट्टी में मिला दिया, धन की लालसा ने अपनापन उजाड़ दिया, स्त्री के प्रति आशक्ति ने पौरूष को पानी बना दिया, ''चारों की चार शिकायतें थीं।

''योगिराज! हमें फिर से शांति का वरदान दो ''चारों ने फिर अनुनय किया।

योगी ने आंखों से अग्नि बरसाते हुए कहा, '' बुद्धिमान मनुष्यों सुख बाहर में नहीं, सुख का स्त्रोत तुम्हारे भीतर में है। पदार्थ को तुम भोगो पर पदार्थ तुम्हें नहीं भोगें। भोगने में सुख हैं तो बड़े–बड़े ऋषि मुनि अपना सबकुछ ठुकरा कर क्यों सन्यास लेते?

राजा भर्तृहरि ने अपना राजपाट धन–दौलत पुत्र परिवार को छोड़कर साधना का पथ अपनाया क्योंकि वे देख चुके थे कि संसार के रिश्ते कितने स्वार्थी, झूठे और दिखावटी है।

◆◆◆

सम्पादकीय

दशहरा है आसुरी शक्तियों पर देवी शक्तियों की विजय का प्रतीक

राजा रावण जैसे बुद्धिमान, समृद्धिशाली और सैन्यशक्ति से सम्पन्न योद्धा को श्री राम ने जो बनवासी थे, सैन्य शक्ति और शस्त्रशक्ति के न होते हुए भी हराया इस बात को सभी मानते और जानते हैं। यह अन्याय और अत्याचार पर न्याय और सत्य की विजय का अद्‌भुत उदाहरण है।

माता कैकेयी ने श्री राम को चौदह साल का बनवास इसलिए दिलवाया था कि भरत को मैंने राज्य दिलवाया है उसमें किसी तरह की अड़चन न आने पाए। जनता के दिलों में बसे हुए राम के होते हुए भरत की कहीं उपेक्षा न हो लेकिन यह बनवास अच्छे के लिए हुआ। कितने ऋषि मुनियों के, आसुरी शक्तियों के कर्तृत्व और व्यक्तित्व खुलकर सामने आ गए। जहां राम वहीं अयोध्या वाली उक्ति चरितार्थ हो गई। जंगल के सभी राज्य, सुग्रीव की सेना का सहयोग और हनुमान जैसे समर्पित भक्त मिल गए। सभी के सहयोग से लंका पर विजय प्राप्त कर ली।

राजा रावण जैसे लंकाधिपति को धराशायी करके माता सीता को सुरक्षित ले आए तभी सब कहते हैं भगवान के घर देर है अंधेर नहीं है।

लेकिन वह था त्रेतायुग। त्रेतायुग में श्री राम ने रावण को सबक सिखाया तो द्वापर युग में श्री कृष्ण ने कंस को अत्याचारों का फल चखा दिया। लेकिन अभी कलियुग में भगवान भी सोए हुए हैं। तभी तो ये अत्याचारी अन्यायी फलते फूलते हैं। और सच्चे ईमानदार और भले व्यक्तियों को कोई नहीं पूछता। यही हाल राजनीति का है। जिसके पास जन बल और धन बल हैं वह चाहे कैसे अन्यायी अत्याचारी हों, कितने ही उन पर मुकदमे चलते हो कितने गुंडागर्दी कर जीत जाते है। उनको टिकट भी मिल जाता है और कुर्सी भी। धर्मस्थानों और समाज की सभाओं में भी बड़े से बड़ा पद और सम्मान उन व्यक्तियों को मिलता है जो दुहरा जीवन जीते हैं। यही समाज और हर वर्ग की स्थिति है।। कलियुग का अंत होगा तब कहीं सत्‌युग का उदय होगा और पूरी मानव जाति का कल्याण होगा।

○ निर्मला पुगलिया

◆◆◆

अपना परिचय औरों से न पूछें

मैंने सारे धर्मशास्त्र पढ़ डाले हैं। अनेक संतों–महन्तों से मिला हूं। आज तक मेरे सवाल का जबाव मुझे नहीं मिल सका है ?

उसकी उम्र लगभग तीस वर्ष की थी। जन्म से मुसलमान परन्तु हृदय से वह न मुसलमान रह गया था, न हिंदू, न और कुछ–महज एक प्यासी आत्मा, तो जीवन के अतल रहस्यों को खोजना चाहती थी। प्यास अब और भी तेज थी। पश्चिम बंगाल की नम दोपहरी। हवा में एक विचित्र सी घुटन। आज प्रातः ही इस गांव में आया था। सायं अगले किसी गांव में चले जाना था। पद यात्रा हमारी जीवनचर्या है। आज यहां तो कल वहां, यह क्रम चलता ही रहता है। न जाने कितने अनजाने चेहरे हर रोज आंखों के सामने से गुजरते हैं। सबके भीतर एक प्यास, एक व्याकुलता, एक व्यथा, अपूर्णता का बोध। कोई इस प्यास को शराब के प्याले में घोलकर पी जाता है, कोई इसे रूपये गिनने में भूलने की कोशिश करता है, कोई संतों महन्तों के यहां चक्कर लगा रहा है।

आपका प्रश्न क्या है ? मैनें पूछा।

मैं कौन हूं ? उसने कहा।

अब कौन दे सकता है इस प्रश्न का उत्तर, किसी को भी? कोई दूसरा कैसे बताए कि आप कौन हैं ? प्रश्न तो उसी से है न, जो कि वह है। सवाल अपने बारे में हैं, दूसरे किसी के बारे में नहीं। यह खुद के जानने और समझने की बात है कि वह क्या है ? कौन है ? कुछ है अथवा नहीं ? उसका क्या होने वाला है? शास्त्र और संत, परंपरा और विधान क्या करें इस प्रश्न का ? करोड़ों वर्षों तक दुनियां भर के शास्त्र पढ़कर भी कोई आदमी अपना परिचय उनमें कहां से पाएगा? हजारों जन्मों तक साधु–संतों के पैरों के आगे मस्तक रगड़ते भी रहें, तो भी कोई आपका परिचय आप को कैसे करा देगा? यह बात तो स्वंय से ही पूछने की हैं, स्वंय के जानने की है। स्वंय नहीं जान सकते तो कोई नहीं बता सकता, लेकिन स्वंय का न जानना असंभव है। हमें पता ही नहीं कि हम कितना जानते हैं। मन की गहराइयों में उतरकर कभी देखा ही नहीं कि वहां कितना गहरा खजाना गड़ा है। अगर हम अपने आप से वास्तव में कुछ पूछते हैं तो उसका उत्तर मिलना अनिवार्य होगा। यह हो सकता ही नहीं कि आप अपने बारे में अपने

को ही पूछें और उत्तर न मिले। पूछने का अभिनय ही करना हो तो और बात है पूछने पर तो उत्तर तत्काल आएगा। औरों से पूछने की जरूरत नहीं। हमारा अर्न्तमन अपने आप सब कुछ जानता है–हमारा प्रश्न भी, उत्तर भी अगर जिज्ञासा की वाती भीतर कहीं जल उठी है तो ज्ञान का प्रकाश होगा ही। न होने का कोई कारण ही नहीं।

मूल में ही भूल

हम तो बाहर–बाहर ही भटक रहे हैं। वह नवयुवक तो एक उदाहरण मात्र है, प्रश्न तो यह सारी मानवता का है। हजारों वर्षों से इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिए पंथों को बदला जा रहा है। ग्रंथों को बदला जा रहा है, संतों महंतों को बदला जा रहा है। वेश और परिधान बदले जा रहे हैं, नाम और सम्प्रदाय बदले जा रहे हैं और धारण किए जा रहे हैं नये नाम, नये वेश, नये परिधान, नये मंत्र, लौकेट में मढ़ी नये–नये गुरू और भगवानों की तसवीरें, और नये–नये मठ, आश्रम तथा मंदिर। सबकुछ बदला जा रहा है, केवल अपने को ही नहीं बदला जा रहा है। सब कुछ धारण किया जा रहा है, केवल अपने को धारण नहीं किया जा रहा है। जब तक अपने को भीतर से नहीं बदला जाएगा, अपने भीतर को धारण नहीं किया जाएगा, यह नये–नये पंथ, ग्रंथ, संत–महंत, वेश और परिधान गुरू और भगवान, मंत्र लौकेट में मढ़ें चित्र कुछ काम नहीं आने वाले हैं। पूरी तरह से व्यर्थ साबित होंगे ये भीतर की प्यास बुझाने के लिए, भीतर के प्रश्न का समाधान देने के लिए वह उत्तर तो स्वंय ही मिलने वाला है।

स्वयं से खोजो स्वयं को

भगवान महावीर से पूछा गया–कौन सा उपाय है सत्य से साक्षात्कार का ? किस रास्ते से होंगे आत्म दर्शन और परमात्म दर्शन? महावीर ने संक्षिप्त उत्तर दिया–अप्पणा सच्च मेसेज्जा–अपने से खोजो सत्य को। केवल अपने में ही हो सकेंगे आत्मा और परमात्मा के दर्शन, दूसरों के माध्यम से नहीं। तुम केवल अपने माध्यम से पहुंच सकोगे अपने तक, अपने भीतर विराजित प्रभु तक नहीं कहा महावीर ने कि तुम मेरी शरण में आओ, मेरा चित्र लोकेट में डालो, मेरा संन्यास लो, तभी होंगे तुम्हें आत्म–दर्शन और परमात्म दर्शन, जैसा कि अक्सर आज के तथा कथित भगवानों के पास सुनने को मिलता है।

एक ऐसे ही भगवान से मेरा मिलना हुआ एक बार। योग ध्यान के बारे में चर्चाएं चलीं। अचानक बोले वह–मैं इस विषय में आपको कुछ भी नहीं बताऊंगा।

कारण पूछने पर उन्होंने कहा–पहले आप साहस बटोरें सबके बीच उसे स्वीकार करने का, जिसे आप मुझसे सीखना चाहते हैं। मैनें कहा–आप मुझे वैसा कुछ सिखायें तो सही। धर्म के वे रहस्य, अनुद्भूत तथ्य प्रकट करें तो सही, फिर जहां आप चाहेंगे मैं उसे स्वीकार करने को तैयार हूं। आपकी भक्त मंडली के बीच भी स्पष्ट रूप से घोषणा करने को तैयार हूं कि मैनें यह नया रहस्य केवल आपश्री के पास से ही सीखा है।

लेकिन उनके चेहरे की भाव भंगिमा को देखकर ऐसा लगा, मैं उनके आशय को ठीक से पकड़ नहीं पाया हूं। मैंने जिज्ञासा से उनकी और देखा। उन्होंने स्पष्ट करते हुए कहा–अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त अमुक योगी के मुख्य सचिव मेरे पास ध्यान योग के रहस्य सीखने आए। वह अपने आश्रम से, अपने योगी गुरूदेव से और अपने अभ्यास क्रम से स्पष्टतया असंतुष्ट थे। मैनें उनसे ध्यान –शिविर में भाग लेने को कहा। उन्होंने एक शिविर में कुछ हिचकिचाहट के साथ भाग लिया। दूसरे शिविर में फिर भाग लिया। इस बार वह थोड़े खुले–खुले थे। संकोच भी टूट रहा था। भीतर से आत्म–विश्वास भी आ गया। शिविर के अवसर पर बड़े साहस के साथ वह सबके बीच खड़े हुए और कहा–मुझे आपका ध्यान योग का अभ्यास अधिक सही और प्रभावशाली लग रहा है। मैं इसे स्वीकार करना चाहता हूं। कृपया आप मुझे अपना संन्यास दीजिए। यह था उनका स्वीकार करने का साहस। क्या है यह साहस आप में ?

अब मैं समझ गया था उनका आशय। उनका स्पष्ट संकेत था उनके द्वारा संन्यास लेकर नया नाम, नये भगवां वस्त्र और लौकेट में मढ़ा उनका चित्र धारण करने से ही वे ध्यान–योग के रहस्यों को मुझे बता सकते है। जैसे कि दुनियां में उनके सिवाय इन रहस्यों का किसी को पता ही नहीं है। मैं मन ही मन हंसा। फिर उनसे कहा–पहली बात तो आप यह समझ लें, मुझे अपने में किसी प्रकार का असंतोष नहीं है।

दूसरी बात जो आपने अपने पास संन्यास लेने की कही,यानि कपड़े बदलकर भगवां वस्त्र पहनने की कही, तो कपड़े बदलने में मेरा विश्वास बिल्कुल नहीं है। कपड़े बदलते बदलते युग बीत गए, पीढ़िया बीत गई, अब भी कपड़े बदलने में और दूसरों के गुरूडम का पोषण करने में मैं अपना समय जाया नहीं करना चाहता। किंतु साधना के नाम पर अपना किसी प्रकार का शोषण और किसी दूसरे के अहं का पोषण करना बिल्कुल असंभव है मेरे लिए। मेरे इस उत्तर से उनके मन पर गहरी प्रतिक्रिया हुई।

यह घटना किसी एक व्यक्ति विशेष तक ही सीमित नहीं है। लगभग यही स्थिति आज किसी भी भगवान के दरवाजे खट–खटाकर देखी जा सकती है। हर कहीं यही आग्रह है कि उनका शिष्य बनकर ही, केवल उनके माध्यम से ही सत्य का साक्षात्कार और परमात्मा के दर्शन किए जा सकते हैं। किंतु महावीर जैसा निर्वैयक्तिक संसार में विरल है। वह कहते हैं–मत कोशिश करो तुम मेरे माध्यम से सत्य को पाने की, क्योंकि किसी दूसरे के माध्यम से सत्य का अनुभव नहीं हो सकता है। महावीर के नाम पर चल रही परम्पराओं में भी यह कहने का साहस मिलना कठिन है। क्योंकि सम्प्रदायगत बाधाएं और परम्पराओं के अहंकार उन्हें ऐसा करने से रोकते हैं। लेकिन महावीर अपने में कोई सम्प्रदाय नहीं है। महावीर किसी सम्प्रदाय से बंधे नहीं है। महावीर के माता–पिता भगवान पार्श्वनाथ की परम्परा में ही प्रव्रजित होते हैं। सर्वथा, निर्बन्ध, स्वतन्त्र और निर्वैयक्तिक व्यक्तित्व है महावीर का। इसीलिए वे बिना किसी झिझक, बिना किसी लाग–लपेट के उद्घोषणा करते हैं कि सत्य को पाने का रास्ता तुम्हारे अपने ही पास है, सत्य तो केवल स्वंय से ही पाया जा सकता है। दूसरे तो तात्र निमित बन सकते है। दूसरे तो मात्र संकेत बन सकते हैं। इससे अधिक दूसरों से आशा करना, इससे अधिक दूसरों को मान लेना, दूसरों पर निर्भर होना सबसे बड़ी झूठ है। सत्य पाया उसी ने है जिसने अपने में गहरे डूबकर खोजा है।–जिन खोजा तिन पाइया, गहरे पानी पैठ।

शब्द है समीम, सत्य है असीम

जैन परम्परा में एक विलक्षण आचार्य हो गए हैं–आचार्य पूज्यवाद। अद्भूत साहस था उनमें परम्परा की लीक से ऊपर उठकर सत्य की उद्घोषणा करने का। परम्परागत मान्यताओं में ही सत्य की एकांतिक सत्ता का अहंकार करने वाले चित्त को तोड़ने के लिए उन्होंने दर्शन की भाषा में कहा–संबुद्ध आत्माएं,केवल ज्ञानी आत्माएं जिस अनंत अनंत सत्य का साक्षात अनुभव करती है, उस अनंत धर्मात्मक सत्य का अनंतवां हिस्सा ही वे शब्दों के माध्यम से प्रकट कर सकती है। और जो प्रकट किया गया है उसका भी अनंतवां अगला व्यक्ति ग्रहण कर पाता है। शब्द इतने ससीम है कि उस असीम सत्य का अनंतवां हिस्सा ही वे पकड़ पाने में और हम तक पहुंचाने में सक्षम होते है। और हमारी अपनी समझने की शक्ति इतनी अल्प है कि उसका भी अनंतवां हिस्सा ही ग्रहण कर पाती है। यह स्थिति तो गणधर की है जो उनसे सीधा श्रवण करते हैं। वे जब उसे प्रतिपादित करते हैं तो जो अनंतवां भाग उन्हें मिला, वह फिर अनंत गुणा भाग

विभाजित हो जाता है। और उनमें से केवल एक भाग सुनने वाले को मिलता है। उसका भी वह अनंतवां भाग ही स्वंय ग्रहण कर पाता है। पीढ़ी दर पीढ़ी उपदेश परम्परा में बढ़ते–बढ़ते वह अनंतानंत गुणा विभाजित होकर लोगों तक पहुंचता है।

केवल तक तो साक्षात्कार है, उसके पश्वात् वह भी नहीं। अनुभूति–शून्य संप्रेषण की परम्परा चलती है जो प्रत्यक्ष सत्य को परोक्ष विचार के रूप में ग्रहण और प्रतिपादित करती रहती है, और उसमें से अनेक पीढ़िया गुजर जाने के बाद सत्य की पहचान खोजना तक संभव नहीं रहता। अब समझे हम अपनी स्थिति को, हमारी दस हजारवीं पीढ़ी को। जिस परम्परागत सत्य के प्रति हमारे चित्त इतने आग्रह अहंकार से ग्रस्त हैं, उसके पास सत्य का कौन सा, कितना सा छोटा टुकड़ा होगा, अथवा भ्रम ही होगा सत्य का, कौन कह सकता है ?

और उन्हीं शब्दों में उन्हीं शब्दों द्वारा रचे शास्त्रों में, अपनी–अपनी खंडित दृष्टियों द्वारा किए गए उन शास्त्रों के अर्थों में, उन अर्थों के आधार पर खड़ी की गई परम्पराओं को परिपुष्ट करने वाली विधियों चर्चाओं में हम खोजना चाहते है सत्य को उन्हीं में पाना चाहते है अपने भीतर विराजमान प्रभु को यह कैसे संभवं है।

शास्त्र हैं संकेत सत्य के

प्रश्न उठ सकता है, बराबर उठता भी रहा है, हर परम्परा में, कि क्या कोई मूल्य है ही नहीं धर्म–शास्त्रों, पुराणों, आगमों और धर्म ग्रन्थों का ? क्या निरर्थक हैं ये सारी धर्म परम्परायें ? क्या मात्र साम्प्रदायिक अहं का पोषण करने के लिए ही हैं ये पूजाएं–उपासनाएं, विधियां–अनुष्ठान, तिलक–छापे और माला–मनके ? इसे भी हम स्पष्टता समझ लें। कहां तक इनकी अर्थवत्ता है और कहां जाकर ये निरर्थक हो जाते हैं, इस भेद–रेखा को भी समझना जरूरी है। इस भेद–रेखा को नहीं समझने का ही परिणाम है कि धर्म के नाम पर इतने–इतने तथाकथित गुरू और भगवान अपने–अपने मठ, आश्रम, सम्प्रदाय और गुरूडम का पोषण करने के लिए भोली भाली जनता का शोषण करते आ रहे है।

एक छोटी सी घटना स समझें अर्थवत्ता इन धर्मशास्त्रों , धर्मगुरूओं और धर्म परम्पराओं की। रेगिस्तानी इलाकों की पदयात्राओं पर थे हम एक बार। रेतीले टीलों में दूर–दूर बसे छोटे–छोटे गांव। पक्की सड़कें तो बहुत दूर, उन बालू के टीलों में कच्चे रास्तों का भी पूरा पता नहीं। ऊंटों का काफिला जब चलता है, तब एक बार थोड़ा रास्ता बनाता है। किंतु आंधी का एक झोंका आया कि रास्ते

का नामो निशान नहीं रहता है। हमें एक गांव से दूसरे गांव जाना था। हम में से किसी को भी उस मार्ग का पता नहीं था और न ही था हमारे साथ कोई मार्गदर्शक। कोई भी ग्रामीण उस दिन हमारे साथ जाने की स्थिति में नहीं था। अंत में कुछ ग्रामीण भाइयों ने हमें मार्ग की अवस्थिति बताते हुए कहा–आप यहां से पूर्व की ओर चलते रहें। आगे जाकर आपको एक नीम का पेड़ मिलेगा। वहां से आप दाएं घूम जाएं। लगभग तीन मील चलने पर आपको एक वटवृक्ष मिलेगा, उसके पास एक कुंआ भी है। वहां से फिर आप बाएं घूम जाएं, थोड़ी दूर पर एक ढाणी (छोटी बस्ती मिलेगी, जहां से केवल दो मील पर आपकी मंजिल का गांव मिल जाएगा। हम इन्हीं संकेतों के आधार पर चले और पहुंच गए कुछ ही घंटो में अपनी मंजिल पर।

अब हम सोचें, क्या संबंध है हमारी मंजिल के साथ नीम के पेड़ का, वट वृक्ष और कुंए का, ढाणी का ? यदि आप उस मंजिल पर रहने वाले लोगों से इन सबके साथ संबंध के बारे में पूछेंगे तो वे यही कहेंगे कि हमारे गांव के साथ उस नीम, उस वट वृक्ष, उस कुएं और ढानी का कोई संबंध नहीं है। किंतु जिस पहली बार बिना किसी मार्गदर्शक के पहुंचना है उस गांव तक जिसे एकाकी गुजरना है उस रास्ते से, उसके लिए उस नीम, वटवृक्ष, कुएं और ढाणी का बहुत महत्व है। वे महत्वपूर्ण संकेत हैं उस रास्ते पर चलने वालों के लिए। वे आत्म–विश्वास कायम रखते हैं उन पथिकों का कि आप सही मंजिल की ओर सही रास्ते से बढ़ रहे हैं। और यही महत्व है हमारी अन्तर्यात्रा में इन धर्म–शास्त्रों और धर्म परम्पराओं का। ये महत्वपूर्ण संकेत हैं सत्य की अलख जगाने वालों के लिए।

किंतु ये संकेत उन्हीं के लिए महत्वपूर्ण हैं जो सत्य को पाने के लिए चल पड़ें हैं जो नहीं चले है उनके लिए इन संकेतों का कोई मूल्य नहीं। इनका मूल्य है केवल पथ की पहचान के लिए। मंजिल अथवा उसकी पहचान के लिए इसका कोई मूल्य नहीं है। इनकी सार्थकता इसी में है जो बढ़ रहे हैं मंजिल की ओर उनको अंगुलि निर्देश भर कर देते हैं, जैसे कि माता–पिता या गुरूजन बच्चों को अंगुली निर्देश से विभन्न ग्रहों और नक्षत्रों की अवस्थिति का ज्ञान कराते हैं। जो चले नहीं रंच भर भी किंतु पूजा करने लग जाएं उन संकेत बताने वालों की बढ़े नहीं एक कदम भी और पकड़ कर बैठ जाए–उन संकेतों को ही मंजिल मानकर बैठ जाए, स्वंय के संकेतों को सही और दूसरों के संकेतों को गलत सिद्ध करने लगे और फिर उसी के नाम पर लड़ाई, संघर्ष, चारदीवारी, बाडेबंदी, मल्ल युद्ध

और साम्प्रदायिक विद्वेष करने लगे, वह तो अपनी मंजिल तक कभी भी पहुंचने वाला नहीं है। वे संकेत उसका कभी कल्याण करने वाले नहीं है। न हम पहुंच सकते हैं अपनी मंजिल तक उन संकेतों की पूजा करने से, स्तवन प्रार्थना करने से और न पहुंच सकते हैं उन संकेतों के नाम पर साम्प्रदायिक विद्वेष और संघर्ष खड़ा करने से। उन संकेतों की सार्थकता मात्र इतनी ही है कि हम चलें और दिशा बोध के लिए उनका सहारा लें। किंतु इसके साथ गलत संकेतों के प्रति सावधान भी रहें। इससे अधिक इनकी कोई सार्थकता नहीं है। इन संकेतों में मंजिल को खोजना तो सर्वथा बेमानी है ही।

धर्म शास्त्र और परम्पराएं भी मात्र संकेत करते हैं सत्य की ओर। पर सत्य प्राप्ति का माध्यम हम स्वंय ही बन सकते हैं। धर्मशास्त्र, धर्म–परम्परा और गुरू–भगवान मात्र संकेत कर सकते हैं अथवा संकेत बन सकते हैं उस मार्ग के, किंतु सत्य की अनुभूति तो स्वंय के माध्यम से, केवल अपने ही माध्यम से संभव है।

डा. अजय लोढ़ा की निष्काम सेवाओं का बहुमान

न्यूयार्क अमेरिका में पूज्य गुरूदेव के अचानक अस्वस्थ हो जाने पर राजस्थान एसोसियेशन ऑफ नार्थ अमेरिका (राणा) के अध्यक्ष डां. अजय लोढा ने तन, मन, धन से जो निष्काम सेवाएं दीं, उसका बहुमान करते हुए मानव मंदिर मिशन ट्रस्ट, नई दिल्ली ने डा. लोढ़ा के यशस्वी जीवन के लिए मंगल कामना का संकल्प पारित किया।

आर.के.जैन
महासचिव,
मानव मंदिर मिशन ट्रष्ट
नई दिल्ली,

नारी जीवन की विडम्बना

संघ प्रवर्तिनी साध्वी मंजुला श्री

नारी होना कोई अपने में गुनाह तो नहीं है, फिर भी उसे उम्र भर गुनहगार की तरह जीना पड़ता है।

अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी
आंचल में है दूध और आंखों में पानी।

सलौनी दूसरी शादी के लिए तैयार नहीं थी। उसकी पहली शादी ने उसे इतना जर्जरित और आहत कर दिया था कि शादी नाम से ही वह कांपने लगी थी पर मां–बाप की असामयिक मौत और भाई भाभी के तीखे व्यंग बाणों ने उसे फिर एक शादी के बंधन में बंधने को मजबूर कर दिया।

इस बार की शादी वह उजड़े घर को बसाने और अपना आश्रय बनाने के लिए करना चाहती थी। वासना का वेग उसमें पहले भी नहीं था। अवस्था के साथ भावना की परिपक्वता ने उसे और शालीन बना दिया।

अपने ही जाने पहचाने पैंतालीस वर्षीय शेखर की दयनीय दशा देखकर उसके पत्नी वियोग के घाव को भरने के लिए सलौनी की संवदेना जाग उठी। उसने शेखर के दोनों बच्चों पर ममता का लेप लगाते हुए सदा–सदा के लिए मां का प्यार देना स्वीकार कर लिया।

सलौनी जब से शेखर के घर आई, उसने उसके घर और परिवार का काया पलट ही कर दिया। सलौनी एक साहित्यिक व्यक्तित्व और सम्पन्न परिवार की लड़की थी। उसका व्यक्तित्व ही आकर्षक नहीं उसका हर कार्य कौशलपूर्ण था। उसका मानसिक संकल्प था कि मुझे बच्चा पैदा नहीं करना है। पति के पहले वाले बच्चों को ही मातृ स्नेह से सींचकर उनके अभाव को भरना है। लेकिन शादी से पहले शेखर और उसके बच्चे सलौनी का जितना आदर करते थे, शादी के बाद उसको तिरस्कृत करने लगे।

बच्चे ही नहीं, बच्चों का बाप भी अपनी नवागत पत्नी को संदेह की नजर से देखने लगा। बात–बात पर उसे जलील करने लगा। जबकि दूसरी पत्नी आ जाने के बाद पिता का ध्यान पहले वाले बच्चों से हटकर दूसरी पत्नी पर ही केंद्रित हो जाता है लेकिन यहां तो उल्टा हो रहा है। बच्चों को हर बात पर प्रोत्साहित किया जाता है। पत्नी को बिना मतलब डांट फटकार पिलाई जाती है। उसकी भी कोई अस्मिता है, उसका भी कोई अरमान है। इसका शेखर को कतइ ख्याल नहीं।

जब शेखर को अपना या बच्चों का कोई काम करवाना हो तो सलौनी से बड़े प्यार से बोलता है, बाकी दिन–भर झिड़कियां और दुत्कारें। कितना खुदगर्ज होता है पुरूष। अपने मतलब के लिए औरों को कुचलने में भी उसको झिझक नहीं होता। वे–मतलब किसी की जिंदगी को इतनी बेहरमी से कुचलना, पता नहीं कैसी पैशाचिक आदत है पुरूष की।

सलौनी को अपने जीवन से आत्मग्लानि होने लगी। किसके लिए जी रही हूं मैं? इस संसार में मेरा अपना कौन हैं ? जिस परिवार को सहारा देने के लिए मैनें अपना सबकुछ होम कर दिया उस परिवार ने क्या मूल्यांकन किया मेरे बलिदान का। जो काम मैनें कभी अपनी मां के घर नहीं किए वे सारे काम इनके घर आकर किए। मैनें तो इनके सुख को ही अपना सुख माना। काम सरया का दुख बिसरया वैरी होग्या वैद्य वाली कहावत ऐसे ही लोगों की स्वार्थ परक राजनीति की उपज है।

सलौनी ने शेखर की रूखाई में बदलाव लानक के लिए एक प्रयोग और किया। उसने बच्चों की ओर से आश्वस्त करते हुए कहा–इन बिना मां के बच्चों को मैं मां का अभाव नहीं खटकने दूंगी। लेकिन शेखर! मेरी भावना का भी कुछ आदर करो। मुझे भी एक साथी के प्यार की आवश्यकता है। तुम मुझे प्यार दो, मैं तुम्हें शांति दूंगी। यह सुनकर भी शेखर का संवेदना शून्य दिल नहीं पसीजा।

सलौनी ने सोचा मैं कुएं से निकलकर यहां गड्ढे में कहां आ पड़ी ? क्या एक नारी के लिए पुरूष का आश्रय जरूरी है? मैं इसके बिना भी आराम से अपना भरण–पोषण कर सकती हूं। मेरे पास कुदरत के लिए इतने हूनर हैं कि मै कहीं भी ऊंचा ओहदा प्राप्त कर सकती हूं। मेरे पास वैसे भी सम्पत्ति की क्या कमी है। मेरी सम्पति पर इनकी नजर है। इनकी नाराजगी का एक कारण यह भी है। ये लोग पूरी तरह मेरा शोषण करना चाहते हैं। अपने घर की नौकरानी बना कर रखना चाहते हैं। मेरे पास जो भी कुछ मेरे माता–पिता का दिया हुआ जेवर और मेरी कमाई का पैसा है, वह हड़पना चाहते हैं और फिर निचोड़े हुए नींबू की तरह फेंक देना चाहता है। कभी कभी मन में आता है ऐसे घर को तिलांजलि दे दूं, जहां कुढ़न भरे वातावरण में घुटकर फांसी पर लटकी हुई सी रहती हूं। फिर सोचती हूं यहां से भी चली जाऊंगी तो क्या दुनिया मुझको ही बुरा नहीं कहेगी? सब कहेगे एक बुरा हो सकता है। दुसरा बुरा हो सकता है। सब तो बुरे नहीं होते। हो न हो इस लड़की में ही तालमेल बिठाने की कमी है। इस डर से मन मसोस कर सारे अन्याय, अत्याचार सह कर भी यह जीवन जीने को मजबूर हूं।

साधना का मूल : स्वरूपबोध

–उपाध्याय श्री अमरमुनि

धर्म–साधना भले ही वह तप–साधना हो, जप–साधना हो, तथा दान, शील एवं भाव की साधना हो, सबके मूल में आत्मा है। आत्मा को अनावृत करना, उसकी अनन्त–ज्योति को प्रकट करना ही साधना का लक्ष्य है। धर्म कहीं बाहर नहीं है। वह तो अपना एक स्वभाव है। स्व–भाव को छोड़ कर पर–भाव एवं विभाव में परिणति करना, उसमें अपनत्व का भाव रखना अधर्म है, पाप है, मिथ्यात्व एवं अविद्या है। अतः धर्म, आध्यात्मिक एवं लोकोत्तर साधना का अर्थ है–पर पदार्थों , पर भावों एवं विभावों में जो परिणति हो रही है, उसमें जो अपनत्व की बुद्धि हो गई है, उससे हट कर स्व–भाव में स्थित होने का प्रयत्न करना। क्योंकि पर से हट कर स्व की और आना और स्व में ही परिणति होना धर्म है।

प्रत्येक वस्तु, प्रत्येक द्रव्य अपने स्वभाव में शुद्ध, विशुद्ध एवं परम शुद्ध है। अपने आप में कोई पदार्थ मलिन नहीं है। मलिनता, गंदगी बाहर से आ कर उसे गंदा बना देती है, उसकी निर्मलता को ढक देती है। जैसे सरोवर स्वच्छ, साफ और निर्मल पानी से भरा हुआ है। उसमें उसका तल और तल पर रही हुई प्रत्येक वस्तु स्पष्ट दिखाई दे रही है। यदि उस निर्मल नीर में कोई अपना चेहरा भी देखना चाहे तो भलीभांति देख सकता है। परन्तु आसपास का गंदा पानी एवं कूड़ा–कर्कट उसमें आ कर मिल जाता है, तो वह गंदला हो जाता है, फिर उसमें कुछ भी दिखाई नहीं देता। और जब उस पर हरी–हरी काई छा जाती है। तब तो उसकी परत के नीचे रहा हुआ कोई पदार्थ दिखाई नहीं देता और न उसके अंदर रहने वाले जलचर जीवों को बाहर की कोई वस्तु दिखाई देती है। इसी प्रकार जब व्यक्ति स्वभाव से हट कर विभाव में परिणत होता है, तब आत्मा की अनन्त ज्योति, उसके अनन्त गुण एवं उसकी अनन्त शक्ति कर्म के आवरण से आवृत्त हो जाती है। तब वह न स्व–स्वरूप को भली–भांति जान सकता है और न पर के स्वरूप को ही यथार्थ रूप में देख पाता है।

श्रमण भगवान महावीर ने अपने प्रवचन में कहा है, कि साधक को सर्वप्रथम यह जान लेना चाहिए कि मैं कौन हूं ? मेरा स्वरूप क्या है ? मैं यहां क्यों और कहांसे आया हूं ? और मुझे कहां जाना है ? इस प्रकार अपने यथार्थ स्वरूप को और अपनी वास्तविक स्थिति को जानने वाला साधक ही अपने साध्य को सिद्ध कर सकता है। ऐसे साधक की साधना उसका संयम उसका तप–जप उसका

आचार–विचार और उसका चारित्र ही सम्यक् है। अतः जिसने अपने को जान लिया, उसने सब कुछ जान लिया, उसके लिए कुछ भी जानना एवं प्राप्त करना शेष नहीं रह जाता है। परन्तु जिसने अपने स्वरूप को नहीं जाना, उसने इधर–उधर के बहुत कुछ जान कर भी कुछ नहीं जाना, उसने इधर–उधर के बहुत से क्रिया कांड एंव तप–जप करके तथा यश कीर्ति एवं सांसारिक सुख साधना और पदार्थ पा कर भी कुछ नहीं पाया। आध्यात्मिक दृष्टि से यह पाना कुछ भी तो नहीं पाना है। क्योंकि इनमें से कुछ भी तो उसके अपने पास नहीं रहता। बाहर के पदार्थ अपने से सर्वथा भिन्न बाहर में ही रहते हैं। उनका ढेर लग जाने पर भी उनसे अपने स्वरूपका जरा भी विकास नहीं हो पाता, उससे स्वरूप में जरा–सी भी तेजस्विता एवं दिव्यता नहीं आ पाती। इसके विपरीत उनके व्यामोह में पड़कर वह पतन की ओर लुढ़कता है। और उसकी दिव्य चेतना धूमिल पड़ जाती है। फलतः वह अनंत–अनंत संसार कानन में भटक जाता है। अतः भगवान् महावीर ने स्पष्ट शब्दों में कहा है–सबसे पहले अपने आप को जानो, अपने स्वरूप को पहचानो। एक का पूर्ण रूप से परिज्ञान कर लो, तो तुम को सबका परिज्ञान हो जाएगा। तुम स्वंय अनंत हो, विराट् हो। इस विराट् और अनंत ज्योति में सब कुछ हस्तामलकवत् स्पष्ट हो जाएगा। फिर कहीं बाहर भटकने की और दौड़धूप करने की आवश्यकता नहीं रहेगी। इसलिए जो एक को जान लेता है, वह सब कुछ जान लेता है–**"जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइं"।** अपने स्वरूप को जानने की जिज्ञासा के साथ वह अपने में गहरा उतर कर अपने आपको जान लेता है, तब उसे अपने स्वरूप पर दृढ़ श्रद्धा हो जाती है, और वह अपने स्थिर एवं केन्द्रित होने का प्रयत्न करने लगता है। फिर उसके मन में न स्वर्ग के सुखों का विकल्प रहता है, और न नरक के दुःखों का। वह यह भलीभांति जान और समझ लेता है कि सुख भी मेरा अपना नहीं है और दुख भी मेरा अपना नहीं है। शुभ और अशुभ दोनों वैभाविक परिणति के परिणाम है। जो अपना नहीं है, आया हुआ है, वह एक नियतकाल तक ही रहने वाला है। उसके बाद वह जाएगा ही। फिर शुभ पर अनुराग करके उन्हें पकड़ने का और अशुभ पर द्वेष करके उन्हें धकेलने का प्रयत्न करना मूर्खता है। और वास्तव में दुःख एवं संसार और कुछ नहीं, यह अज्ञान और मूर्खता ही है। जो अपने नहीं है, उन्हें अपना समझ कर उनमें आसक्त बने रहना ही दुःख है। इस प्रकार व्यक्ति जब अपने आप में केन्द्रित होने का प्रयत्न करता है, तो वह एक दिन स्वतः ही दुःखों एवं बंधनों से मुक्त हो जाता है। इसलिए साधना के पूर्वस्वरूप का बोध होना आवश्यक है। यही साधना का मूल है, प्राण है। यदि उसके अभाव में केवल क्रिया

काण्ड ही चलता रहता है, तो उसका कोई अर्थ नहीं है। किसी के पास मूलधन है ही नहीं, तो ब्याज कहां से आएगा ? यदि कोई कहे कि मैनें मूल (धन) तो दिया नहीं, पर मुझे ब्याज लेना है तो लोग उसे मूर्ख कहेंगे। यदि वृक्ष का मूल नहीं हैं, तो उसके अंकुर, टहनियां, पत्ते, फूल एवं फल कहां से होंगे ? अतः जिसे अपने स्वरूप का परिज्ञान नहीं है, उसकी बाह्य साधना का कोई अर्थ नहीं रह जाता है। आगम में उसकी साधना को, आचार को और क्रिया कांड को मिथ्याचारित्र कहा है, अज्ञानपूर्वक की जान वाली जड़क्रिया कहा है। आध्यात्मिक विकास की दृष्टि से उसका कोई मूल्य नहीं है। इसका यह अभिप्राय है, कि साधक को आत्मस्वरूप को जानना चाहिए। बाहर में दिखाई देने वाला रंग–रूप, आकार, लंबाई–चौड़ाई, दुबला–मोटापन आदि ये सब शरीर के अंग हैं। आत्मा का बाहर में कोई आकार परिलक्षित नहीं होता। वह न काला है, न गोरा है, न लंबा है और न बौना है, न दुबला है और न मोटा है, न भारी–भरकम है और न हल्का है। वह शरीर में रहता है, पर इससे सर्वथा भिन्न है। जैसे व्यक्ति वस्त्रों से अपने तन को ढके हुए भी शरीर से भिन्न है। दूध में मिश्रित जल दूध–सा लगता है, परन्तु वास्तव में दूध अलग वस्तु है और पानी अलग वस्तु है। इसी प्रकार आत्मा शरीर में रहते हुए भी शरीर से भिन्न है। शरीर एक सीमित समय तक रहता है, उसके बाद वह नष्ट हो जाता हैं पर आत्मा का अस्तित्व एक शरीर के छूट जाने के बाद भी बना रहता है। शरीर के विनाश के साथ उसका विनाश नहीं होता। शरीर नाशवान है, क्षणिक है, पर आत्मा अविनाशी है, नित्य है। इसलिए अनित्य भावना के द्वारा साधक अपने इसी स्वरूप का चिंतन करता है। एकत्वभावना एवं अशरणभावना का यह अर्थ नही है कि संसार में कोई किसी का नहीं है, अतः किसी के कष्ट के समय, बीमारी के समय और आपति के समय उससे किनारा कर लेना, उसे सहयोग नहीं देना। समय पर सेवा करना साधक का प्रथम कर्त्तव्य है। तप–साधना चल रही हो, और कोई साधु बीमार पड़ गया, उस समय यदि साधु तप करते हुए सेवा नहीं कर सकता है, तो आगम में स्पष्ट कहा है, वह तप को छोड़ कर सेवा करे। अतःएकत्व एवं अशरण भावना का अर्थ है कि शरीर परिवार, आदि पर पदार्थों को अपने से भिन्न समझकर उनमें आसक्त न बने, उनमें अपनत्व का भाव न रखे। नदी को पार करते समय साधक नौका पर सवार होता है, परंतु नदी को पार करते ही उसे छोड़ देता है। वह नौका को अपने से भिन्न समझता है, उसमें अपनत्व का भाव नहीं रखता। नौका केवल नदी को पार करने का साधन है। इसी प्रकार आगम कहता है–शरीर एक नौका है और उसमें स्थित आत्मा नाविक है। शरीररूपी नौका मै नहीं हूं, मैं इससे सर्वथा भिन्न हूं, यह तो केवल

संसारसागर से पार होने का साधन है। इसलिए उसे छोड़ते समय साधक के मन में न तो भय होता है और न किसी प्रकार का विकल्प उठता है। उसकी समता मृत्यु के समय भी बनी रहती है। वह यह समझता है कि शरीर तो नाशवान है। विनाश को प्राप्त होना, इसका स्वभाव है। इसके नाश होने से मेरा तो नाश होता नहीं, आत्मा के असंख्य प्रदेशों में से एक भी प्रदेश कम होता नहीं, फिर अतः जो मेरा नहीं है उसके लिए चिंता क्यों करूं। स्कन्दकमुनि की कथा आपने सुनी होगी ? मुनि के प्रति राजा को अपराध की भ्रांति हो गई। उसने मुनि को मृत्युदंड दे दिया और जल्लादों से कहा कि शस्त्र से मुनि की खाल (चमड़ी) उतार कर मेरे पास ले आओ। जब जल्लादों में मुनि को राजा का आदेश सुनाया, तो मुनि के मन में चिंता की कोई रेखा नहीं उभरी। उनके मन में राजा या जल्लादों के प्रति जरा भी द्वेषभाव नहीं आया। मृत्युदूत के आगमन के पूर्व जो प्रसन्नता थी, वही प्रसन्नता उस समय थी, जब कि मृत्यु उनके सामने खड़ी थी। वह महान् आत्मा उस समय भी अपनी साधना में संलग्न था, अपने स्वरूप में स्थित था। उनके मन में न देह पर ममत्व था, और न राजा पर क्रोध, आवेश एवं प्रतिशोध तथा द्वेषभाव था। उनके मन में शत्रुता का कोई विकल्प नहीं उठा। शत्रु और मित्र के भेद से वे ऊपर उठ चुके थे। यही कारण है कि खाल उतारने पर भी उनकी अध्यात्म साधना की धारा प्रवहमान रही। इसका यह अभिप्राय नहीं है, कि उन्हें वेदना नहीं हुई। चमड़ी उतारी जाए और कष्ट न हो, यह असम्भव है। कष्ट तो हुआ, पर उसका द्वेषमूलक संवेदन नहीं हुआ। जब दृष्टि शरीर में रहती है, तब उसमें घटने वाली हर घटना का संवेदन होता ही है–भले ही वह घटना अनुकूल हो या प्रतिकूल, शुभ–सुखरूप हो या अशुभ–दुःखरूप। परंतु आत्म चेतना की परिणति होती है, जब बाहर हट कर अपने स्वरूप में और विभाव से हट कर स्वभाव में परिणत होती है। तब साधक शरीर एवं इंद्रियों के माध्यम से होने वाले संवदेन में रस नहीं लेता। वह यह विचार करता है कि मेरा तो नाश हो नहीं रहा है। जो कुछ नष्ट हो रहा है, वह मेरा नहीं है, और जो मेरा अपना है, उसे कोई नष्ट कर नहीं सकता।

गीता में श्रीकृष्ण ने भी कहा है–'इस आत्मा को न शस्त्र काट सकते हैं, न अग्नि इसे जला सकती है, न इसे जल गला सकता है, और न वायु इसका शोषण कर सकता है। किसी भी भौतिक–शक्ति में यह ताकत नहीं है कि उसका विनाश कर सके।' **''नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं बहति पावकः। न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारूतः।**

बात यह है कि मुनि की खाल खींची जा रही है, पर वे शांत है। उनके चेहरे

पर दुःख, वेदना एवं विद्वेषभाव की एक भी रेखा परिलक्षित नहीं होती। उनकी दृष्टि में जल्लाद तो अपराधी एवं शत्रु है ही नहीं, क्योंकि वे तो केवल अपनी ड्यूटी का,राजा के आदेश का पालन कर रहे हैं। राजा भी वास्तविक शत्रु नहीं हैं, वह तो केवल निमित्तमात्र है। वास्तव में राग द्वेष एवं कषाय से युक्त परिणामों से जो कर्म बांधे थे, वे ही उदय में आ रहे हैं। मुनि–विचार करते हैं कि जब कर्मबंध करते समय खेद एवं दुःख नहीं हुआ, अब जब कि वे उदय में आ कर अपना फल दे रहे हैं, तब क्यों दुःखी बनूं ? जो कर्म किया है, उसका फल समभाव से भोगना चाहिए–भलेही वह अशुभ हो या शुभ। मुझे बाह्य निमित्तों को कुछ नहीं कहना है। वास्तव में मेरा संघर्ष तो असली शत्रु से है और उसी को नष्ट करना है। वह है–राग द्वेष एवं कषायभाव। क्योंकि इनमें परिणत आत्मा ही संसार में परिभ्रमण करता है। इस प्रकार मुनि वीतरागभाव में स्थित होकर द्रष्टा बनने का प्रयत्न करते है। भगवान महावीर ने एक ही बात कही कि ''साधक! तू अपने स्वरूप का परिज्ञान कर। तू शरीर से भिन्न है। शरीर जड़ है, नाशवान है, परन्तु तू इससे विपरीत चेतन है, अविनाशी है। इसलिए शरीर के नष्ट होने पर भी तेरे स्वरूप का, आत्म ज्योति का नाश नहीं होता। शरीर तेरा अपना नहीं है, इसलिए इसमें अपनत्व का भाव रखना मिथ्या है। वास्तव में तू इसका कर्ता है ही नहीं, फिर इसका व्यामोह क्यों ? सम्पूर्ण दुःख इस मिथ्याकल्पना एवं धारणा का है कि मेरा शरीर नष्ट हो रहा है। इस मिथ्याविकल्प का परित्याग करके ज्ञाता और द्रष्टा बन कर रह फिर तुझे किसी भी प्रकार का प्रतिरूप–वेदन नहीं होगा, और तू कर्मबंधन से मुक्त हो जाएगा। कहने का अभिप्राय यह है कि आध्यात्मिक विकास के लिए दृष्टि का सम्यक् होना आवश्यक है। इससे वह स्व और पर के भेद को सम्यक्तया जान लेता है। भेद विज्ञान से जिसने अपने और शरीर के भेद को जान लिया और आत्मा के साथ उसका (शरीर का) क्या संबंध है, क्यों हैं और कब तक रहेगा ? यह जान लिया तो सब कुछ जान लिया और सब कुछ प्राप्त करने का मार्ग पा लिया। यही कारण है कि आगम मे सम्यग–दर्शन की अध्यात्म साधना का धर्म का और मोक्ष मार्ग का मूल कहा है। अर्थात् सम्यक् श्रद्धा निष्ठ व्यक्ति का ज्ञान और चारित्र ही सम्यग्–ज्ञान और सम्यग् चारित्र होता है। दर्शन की पर्याय शुद्ध हुए बिना ज्ञान और चारित्र की पर्याय शुद्ध, विशुद्ध और परम शुद्ध हो नहीं सकती और उसके अभाव में साधक मोक्ष–मार्ग पर गति प्रगति नहीं कर सकता। सम्यक् दर्शन, सम्यक ज्ञान और सम्यक् चारित्र की समन्वित साधना ही मोक्षमार्ग है। सम्यक् दर्शन और सम्यक् ज्ञान उसका मूल है। इसलिए स्व–स्वरूप पर श्रद्धा एवं स्व–स्वरूप का बोध होना परमावश्यक है।

व्यक्तित्व पर रंगों के प्रभाव

रंग चाहे प्राकृतिक हों या कृत्रिम, मानव व्यक्तित्व पर इसका तात्कालिक और दूरगामी प्रभाव निश्चित रूप से पड़ता है। रंगों के असर शरीर, मन, भावना, प्रवृत्ति और क्रिया–व्यवहारों पर स्थूल और सूक्ष्म रूप से भी पड़ते है। खासकर धार्मिक अनुष्ठानों और आध्यात्मिक साधनाओं के प्रयोजनार्थ रंगों का चयन परम्परागत रूप से बहुत ही सावधानीपूर्वक किया जाता रहा है। पाश्चात्य देशों में वैज्ञानिकों ने रंगों के प्रभाव का अध्ययन बहुत ही विस्तार ढ़ंग से किया है। आजकल स्वास्थ्य और चिकित्सा के लिए भी रंगों का इस्तेमाल किया जाता है। भारतीय संस्कृति में सजावट, श्रृंगार–प्रसाधन और विभिन्न राजसिक उपक्रमों में विभिन्न रंगों का प्रयोग किया जाता रहा है।

विभिन्न वस्तु और रंगों से बहुत ही सूक्ष्म रूप से भिन्न भिन्न आवृतियों वाली रेडियेशन व तरंगे प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से हमेशा निःसृत होकर आवर्त्तित और परावर्त्तित होती रहती हैं। ये सूक्ष्म कण हमारे शारीरिक अस्तित्व त्वचा, मांसपेशियां, स्नायु, ग्रन्थियां, रासायनिक संरचनाओं, मस्तिष्कीय–तरंगों आदि जाने–अनजाने में प्रभावित कर मनो–भावनात्मक रूप से भी परिवर्तन लाती है। इसके परिणाम स्वरूप विचार, सोचने समझने की शक्ति और दृष्टिकोण, व्यवहार आदि मनोदशा को प्रभावित करती है। ये रंग चाहे प्रकाश,वस्त्र, दीवार, बिस्तर, पर्दे, कोई उपकरण, वस्तु व दृष्टिगत् चीज हो या अदृश्य हो, इसके प्रतिक्रिया स्वरूप दुष्प्रभाव से बचने और विशेष प्रयोजन के लाभार्थ विवेकपूर्वक चयन कर प्रयोग करना चाहिए।

लाल रंग से निकलने वाली सूक्ष्म तरंगों व रेडियशनों से तामसिक और राजसिक प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति जैसे –क्रोध के समय, हिंसा, काम वासना आदि प्रदीप्त होते हैं। इसलिए क्रोध के समय आंखे और चेहरा लाल हो जाता है। युद्ध में जाते समय और देवी की अराधना बलि देने के पश्चात् रक्त का टीका लगाने की प्रथा है। शादी के समय प्रयुक्त होने वाली वस्तुऐं–वस्त्र, सिंदूर व अन्य उपहार आदि लाल रंग की ही होती है जो मंगलदायक मानी जाती हैं। लाल रंग से निकलने वाली सूक्ष्म तरंगें व रेडियेशन मस्तिष्क में बीटा तरंगों को बढ़ाती हैं जो एकाग्रता, उत्तेजना, तनाव, व्यग्रता, अत्यधिक मानसिक सतर्कता आदि को उत्पन्न करने के लिए जिम्मेदार हैं।

काला रंग से निःसृत सूक्ष्म तरंगें व रेडियशन में से तामसिक और निर्गुणात्मक प्रवृत्तियों शोक, विलाप, दुख अथवा भावविहीनता की मनःस्थिति को प्रगट करता है। शोक प्रकट करने के लिए कब्रिस्तान में जाना और विलाप प्रकट करने के

लिए कोप भवन में जाते समय काला वस्त्र ही पहनते हैं। विरोध प्रदर्शन प्रकट करते समय काला बिल्ला या काली पट्टी बांधते या हांथों व सिर में लपेटते हैं। श्मशान भूमि में सिद्धियों के लिए तांत्रिक साधक लोग काला चोंगा व लबादा ही अक्सर पहनते हैं। जीवन–मुक्त संत, अवधूत, फकीर, दरवेश, आदि ब्रह्मज्ञानी व रहस्यवादी सिद्धों के द्वारा भी काला पोशाक वस्त्र का ही इस्तेमाल परम्परागत ढंग से किया जाता है।

नारंगी और गेरू रंग से निकलने वाली सूक्ष्म तरंगों व रेडियेशनों से आध्यात्मिक, निर्गुणात्मक व प्रतिक्रिया रहित मनःस्थिति की अभिवृद्धि होती है। यह निःसृत तरंगें मस्तिष्कीय तरंगों को डेल्टा तरंगों में परिवर्तित करती हैं जो गहरे ध्यान की अवस्था में और गहरी निद्रा की अवस्था में मस्तिष्क में स्वतः ही उत्पन्न होती है। इसलिए आध्यात्मिक परम्परावादियों के द्वारा इस रंग का वस्त्र पुरातन कालों से अपनायी जाती आ रही हैं। यह रंग अर्न्तज्ञान, परमशांति, आत्मबोध और अन्तर्चैतन्यता प्राप्ति के लिए संन्यासियों व बौध धर्मावलम्बी मोंक के द्वारा प्राचीन काल से ही अपनायी जाती रही है। इस प्रकार सूर्य की प्रातः किरणों में भी यही मिश्रित रंगों की तरंगें प्रकाशित होती है जिसे अल्ट्रावायलेट रेज कहते हैं। इसके प्रभाव से अंदर और बाह्रा संक्रमनों की रक्षा होती है। त्वचा रोगों से मुक्ति, अस्थियों में मजबूती, तेजस्विता, बल बुद्धि की प्रखरता, दृढ़ इच्छाशक्ति आदि की प्राप्ति के लिए सूर्योपासना महत्वपूर्ण माना गया है। दुनियां के प्रायः सभी देशों में किसी न किसी रूप में सूर्य देवता की पूजा अवश्य होती रही है। यह रंग मन को सात्विकता व निर्मलता प्रदान करने साथ ही पाचन–संस्थान व जठराग्नि को भी प्रज्वलित करता है। हरा रंग से निःसृत तरंगें व रेडियेशन्स सात्विक प्रवृत्तियों–प्रसन्नता, शांति, सन्तुष्टि, तनावमुक्ति को मुख्यरूप से प्रभावशील करती हैं। यह तरंगे मस्तिष्कीय तरंगो को अल्फातरंगों में परिवर्तित कर मानसिक शिथिलता, स्फूर्ति, ताजगी, उत्साह, स्मृति की अधिकता उत्पन्न करती है। सत्यवादी, धर्मनिष्ठ, सौम्य और शांत मनःस्थिति वाले लोगों को यह रंग सहज ही प्रिय होता है। ऐसे लोग प्रकृति प्रेमी, भद्र, दार्शनिक और एकान्त प्रिय होते है।

इसी प्रकार पीला रंग–चंचलता,तेजस्विता रचनात्मकता, ब्रह्मचर्य और अति सक्रिय व्यक्तित्व की प्रवृत्ति को बढ़ाता है। ठीक इसके विपरीत भूरा रंग–आलस्य, डिप्रेशन निराशा, विषाद्, ग्लानि, रूग्नता जैसे ऋणात्मक प्रवृत्तिओं को बढ़ाता है। गहरा नीला रंग–कुण्ठा, सुस्ती, दुर्बलता आदि मानसिक दृष्प्रवृत्तिओं को बढ़ावा देता है। शरीरिक रूप से गहरा नीला रंग का प्रभाव यकृत, गुर्दे, पाचन–संस्थान

की मंदता, रक्तविकार आदि पर दोषपूर्ण रूप से पड़ता है। बैगनी रंग की सूक्ष्म तरंगें व रेडियेशन्स से ईर्ष्या–द्वेष, छल, कपट, धोखा आदि मानसिक विकारो को बढ़ाता है तथा शारीरिक रूप से फोड़े, फुन्सियां, दिनाई, एक्जीमा, चर्मरोग आदि को पोषित करता है। गुलाबी रंग राजसिक व विलासिता संबंधी मानसिक प्रवृत्तियों के वृद्धि के लिए जिम्मेदार होता हैं।

इसलिए रंगों का उपयोग किसी भी रूप में करने के लिए अपनी विवेकशीलतापूर्वक निर्णय कर अपनी प्रवृत्तियों, उद्देश्य, क्षमता, माहौल आदि तथ्यों के आधार पर अवश्य करनी चाहिए ताकि रंगों के विपरीत व हानिकारक दुष्प्रभाव से बचा जा सके। अपनी शारीरिक, मनोभावनात्मक और आध्यात्मिक अस्तित्व को सरंक्षित, विकसित व संतुलित बनाते हुए जीवन को और अधिक सम्मुन्नत किया जा सकता है।

आओ अंदर तुम मेरे भगवान

सूना मंदिर,आओ अंदर तुम मेरे भगवान
मेरी शुभ भावना है, सफल हो कामना है।

1. कितने हो दूर तुम, पलके विछाऊं तेरा राह में
थक गए चरण मेरे, चाहते विराम तेरी छांह में
लम्बा सफर है, पग–पग डर है, पूर्ण करो अरमान।

2. जलती है दीपमाला, ज्योति यह मंद कैसे हो रही
सोयें इंसान जागे, वासना शक्ति को सारी खो रही
स्नेह से भर दो, भय को हर दो मेरे जीवन प्राण।

3. मध्य भंवर के बीच, नाव यह डगमग मेरी डोलती
युग की हवा यह कैसी श्रद्धा को तर्क सहारे तोलती
विश्वास अमर दो, सांस में भर दो, चढूं चीर तूफान।

4.घिर–घिर आती काली रात को बदलू स्वर्णिम प्रात में
बिछुड़ी यह धारा मेरी मिलजा मेरे प्रिय सागर साथ में
करूण नजर दो, पीड़ा हर दो, भर दो अंतर प्राण।

○ **साध्वी मंजु श्री**

आहट तक नहीं होती
चला आता है उच्च रक्तचाप

उच्च रक्तचाप को अगर आधुनिकता का अभिशाप कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। इस तथाकथित प्रगतिशील युग ने जहां अनेक सुख–सुविधाओं के साधन जुटाएं हैं वहीं मानसिक अप्रसन्नता, चिंता, शोक, क्रोध आदि कि स्थितियां भी पैदा की हैं। जिनसे मस्तिष्क, हृदय, आत्मा, ज्ञानेन्द्रीय और कर्मेन्द्रिया प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकती हैं।

हमारे शरीर में रक्त वाहिनी धमनियों में जो रक्त दौड़ता है, उसको दौड़ने की गति हृदय से मिलती है। जो दिन रात एक पम्पिंग मशीन की तरह कार्य करते हुए रक्त को पम्प करता रहता है। इस दिल का धड़कना (हर्ट बीट) कहते हैं। हृदय के दबाव से रक्त धमनियों में पहुंचता है और शरीर में भ्रमण करते हुए वापस हृदय के पास लौट आता है। हृदय रक्त को शुद्ध करके वापस शरीर में भ्रमण करते हुए धमनियों में भेज देता है। रक्त पर हृदय की पम्पिंग का जो दबाव पड़ता है इसे रक्तचाप (ब्लड प्रैशर) कहते हैं। इस प्रकार ब्लड प्रैशर होना स्वाभाविक प्रक्रिया है। कोई रोग नहीं है पर जब कुछ कारणों से यह दबाव उठता है तो इसे ''उच्च रक्तचाप''कहते हैं। उच्च रक्तचाप जिसे आज की परिभाषा में 'हाई ब्लड प्रैशर' कहते है। एक अभिशाप वर्ग का रोग है। जैसे बुद्धिजीवी, वकील, लेखक, अधिक धन–धान्य से सम्पन्न व्यक्ति, चिंतनशील वैज्ञानिक और एलोपैथिक औषधियों का अंधाधुंध प्रयोग भी इस रोग का कारण है। गांवों की अपेक्षा यह रोग शहरों में अधिक पाया जाता है। यह रोग मनुष्य के शरीर में चोर दरवाजे से प्रविष्ट होता है। जिसका प्रारम्भ में मनुष्य को नहीं पता चलता है। जब यह रोग अच्छी तरह अपना स्थान बना लेता है। इसलिए इस रोग को साइलेंट किलर के नाम से जाना जाता है।

उच्च रक्तचाप के कारण–उच्च रक्तचाप दो प्रमुख कारणों से पाया जाता है। पहला कारण शारीरिक और दूसरा कारण मानसिक है।

1.रक्त वाहिनी शिराओं का मार्ग संकीर्ण हो जाना।
2.रक्त में कोलेस्टेरोल नामक तत्व की मात्रा से ज्यादा हो जाना।
3.शरीर में मोटापे का बढ़ जाना।
4.पैतृक प्रभाव।
5.गुर्दे या जिगर की खराबी।

6.अधिक मांस–मदिरा का सेवन।

7.मसालेदार भोजन का सेवन।

मानसिक कारण–मनुष्य का मन बड़ा ही संवेदनशील होता है। उस पर जो व्यक्ति स्वभाव से भावुक होते हैं तो यदि उनको शक्ति, क्रोध, ईर्ष्या, चिंता या भय का मानसिक आघात लगे तो उनके दिल की धड़कन बढ़ जाती है उनके दिलो–दिमाग पर दबाव पड़ता है, जिससे तनाव बढ़ता है और ब्लडप्रैशर बढ़ जाता है। जो जरा–जरा सी बात पर टेनशन एवं उग्रता पैदा करता है और धीरे–धीरे हमारा मस्तिष्क तनाव से कमजोर और थकने लगता है। जिसका परिणाम उच्च रक्तचाप है।

खानपान द्वारा उपचार–1. पेठा, लौकी, बंदगोभी, चौलाई, धनिया, जीरा, पुदीना, ककड़ी, गेहूं, चावल, मूग,नारियल,अदरक,लहसुन, शहद और मट्ठा हितकर हैं। हानिकारक पदार्थों में दही, मांस, मछली, गुड़, केला, आइस्क्रीम, मिठाइयां, कुल्फी, बासी भोजन, इमली, सिरका, अचार, नमक और दोबारा गर्म किया हुआ बासी भोजन है। नित्य समय पर भ्रमण, समय पर भोजन, अधिक परिश्रम न करना, भोजन में संयम रखें और थकान होने पर काम बंद कर देना अति लाभदायक है।पाचन शक्ति ठीक रखें, शरीर पर मोटापा न चढ़ने दें। चिंता न करके चिंतन किया करें। क्रोध, ईर्ष्या, शौक आदि मानसिक रोगों से बचना चाहिए। योग का रक्तचाप का मंद एवं मध्यम अवस्थाओं के संपूर्ण तथा उग्र अवस्था में महत्वपूर्ण चिकित्सा के रूप में व्यवहार किया जा सकता है। श्वसन इसमें रामबाण का कार्य करता है। इसके अलावा योग के निम्नलिखित आसनप्राणायाम, और मुद्रा बहुत ही लाभप्रद हैं। उच्च रक्तचाप के लिए श्वसन,योग निद्रा, शंशाकासन, पवनमुक्तासन,पद्मासन,कूर्मासन,मकरासन,शीतली प्राणायाम,ध्यान। **श्वासन विधि**–पीठ के बल लेट जाएं। समस्त अंगों तथा मासपेशियों को एकदम ढीला छोड़ दें। कहीं भी अड़चन या तनाव नहीं रहना चाहिए। पूरे शरीर को रिलेक्स करने के बाद आंखे बंद रहनी चाहिएं। धीरे–धीरे गहरी सांस लीजिए और छोड़िए सांसे जितनी गहरी ओर शांत होंगी तथा शरीर को एकदम ढीला रखें। जितना ढीला शरीर उतना ही शीघ्र आप अधिक लाभ प्राप्त करेंगे। बाहों को दोनों बगल में शरीर से थोड़ा हटकर फैलाएं और हाथों को ढीला छोड़ दें। इस आसन में शरीर की स्थिति मुर्दे के समान हो जाती है। इसीलिए इसे शवआसन कहां जाता है। रोज सुबह–शाम कम से कम 10 मिनट तक यह आसन करना चाहिए। **लाभ**–इस आसन द्वारा समस्त शरीर की थकान दूर हो जाती है।

मासिक राशि भविष्यफल–नवम्बर 2005

डॉ.एन.पी मित्तल, पलवल

मेष–मेष राशि के जातकों के लिये व्यापार–व्यवसाय की दृष्टि से यह माह पर्याप्त लाभ देने वाला है। इस माह किन्हीं जातकों के कार्य क्षेत्र में परिवर्तन की भी आशा है। इन जातकों के मित्र इनकी मदद को आगे आयेंगे किन्तु परिवार में मन मुटाव संभव है जिससे मानसिक उद्विग्नता रहेगी। अपनी मां की सेहत का ध्यान रखें। विद्यार्थियों की मेहनत सफल होगी। दाम्पत्य जीवन सामान्य तौर पर सुखी रहेगा।

वृष–वृष राशि के जातकों के लिये व्यापार–व्यवसाय की दृष्टि से यह माह सामान्य लाभ देने वाला है पर व्ययाधिक्य भी होगा। किसी नये कार्य की योजना भी बन सकती है। कार्य रूक–रूक कर बनेंगे। शत्रु आपको परेशानी में डाल सकते हैं। बुजुर्गों की राय से कार्य करें, सफलता मिलेगी। किन्हीं जातकों का रूका हुआ धन इस माह मिल सकता है। किसी अन्य के मामले में अकारण हस्तक्षेप न करें। आत्म सम्मान को ठेस लग सकती है। अपने स्वास्थ्य का ख्याल रखें।

मिथुन–मिथुन राशि के जातकों के लिये यह माह व्यापार–व्यवसाय की दृष्टि से पूर्वार्ध की अपेक्षा उत्तरार्ध अधिक लाभ प्रद है। व्ययाधिक्य चिंता का कारण बन सकता है। लड़ाई झगड़े से दूर रहें। शत्रु सिर उठाएंगे किंतु उन्हें हार का सामना करना पड़ेगा। कुछ छोटी–बड़ी यात्राओं के भी योग बनेंगे जिनमें सावधानी अपेक्षित है। समाज में यश–मान–प्रतिष्ठा बनी रहेगी। दाम्पत्य जीवन सामान्य रहेगा। स्वास्थ्य सामान्य रहेगा।

कर्क–कर्क राशि के जातकों के लिये यह माह लाभालाभ की स्थिति लिये होगा। कार्य क्षेत्र में कोई परिवर्तन भी करना पड़ सकता है। कुछ यात्राएं लाभ प्रद हो सकती हैं किंतु राह में सावधानी अपेक्षित है। पत्नी तथा बच्चों की सेहत की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। इस माह योजनाएं अधिक बनेंगी, किंतु उनका क्रियान्वयन कम होगा। परिवार की ओर से कोई तनाव की स्थिति आ सकती है। सप्ताह में यश–मान प्रतिष्ठा बनी रहे, इसके लिये सचेत रहें।

सिंह–सिंह राशि के जातकों के लिये व्यापार–व्यवसाय की दृष्टि से यह माह लाभप्रद सिद्ध होगा। माह का आरंभ और अत्यधिक शुभ है तथा मध्य शुभ फल दायक है। कार्य क्षेत्र की उन्नति के लिये नई योजनाएं बनेंगी। सैर सपाटे के मौके आयेंगे। समाज में मान–सम्मान बना रहेगा। छोटी बड़ी यात्राएं होगी जिनसे लाभकी आशा है।

कन्या–कन्या राशि के जातकों के लिये व्यापार व्यवसाय की दृष्टि से यह माह आय से व्यय अधिक कराने वाला है। कि न्हीं जातकों को व्ययाधिक्य के कारण ऋण लेने की परिस्थिति भी आ सकती है। शत्रु सिर उठायेंगे पर आप उन्हें दबा लेंगे। परिवार में सामन्जस्य बनाए रखना होगा। अपनी तथा अपने जीवन साथी के स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें। नये आगन्तुकों से घनिष्ठता बढ़ाना श्रेयस्कार नहीं है।

तुला–तुला राशि के जातकों के लिये व्यापार–व्यवसाय की दृष्टि से यह माह श्रेष्ठ फल दायक है। व्यापार में लाभ तो होगा ही। जिनका रूका हुआ है, उनके पैसे मिलने के आसार है। किन्हीं जातकों को संतान सुख की प्राप्ति भी हो सकती है। कई विद्यार्थियों को, उनके कैरियर का सही चुनाव करने में सफलता मिलेगी जिससे मन में प्रसन्नता होगी यात्राएं लाभप्रद रहेंगी। स्वास्थ्य की दृष्टि से सावधान रहें।

वृश्चिक–वृश्चिक राशि के जातकों के लिये व्यापार–व्यवसाय की दृष्टि से यह माह लाभालाभ की स्थिति लिये रहेगा। राजनिति में रूचि रखने वालों के लिये यह माह अच्छा साबित होगा कुछ जातकों की समाज में यश मान प्रतिष्ठा में वृद्धि संभावित है। छोटी बड़ी यात्राएं होंगी। यात्राओं में लाभ की आशा भी की जा सकती है, किंतु दुर्घटना संभावित है। घर परिवार में सुख–शांति बनाए रखने में ये जातक सफल होंगे।

धनु–धनु राशि के जातकों के लिये व्यापार–व्यवसाय की दृष्टि से यह माह श्रम साध्य एवं संघर्ष पूर्ण परिस्थितियों से गुजरते हुए अर्थ प्राप्ति का रहेगा। हां कोई नई योजना बनाई जा सकती है या उसका क्रियान्वयन हो सकता है। कोई धार्मिक कार्य इन जातकों द्वारा किया जा सकता है। इन जातकों के हित मे रहेगा अगर वे अपने से ज्यादा असरदार आदमी से पंगा न लें। परिवार में सामन्जस्य बिठाने की कोशिश करें। अपने स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें।

मकर–मकर राशि के जातकों के लिये व्यापार–व्यवसाय की दृष्टि से यह माह शुभ फल दायक कहा जाएगा। आपके पुराने लटके हुए काम फिर से शुरू होने का समय है। इस माह नई योजनाओं का श्री गणेश भी हो सकता है। किंही जातकों को वाहन आदि से चोट भी लग सकती है। सरकारी कार्य करने वाले जातक भी अपने उच्चाधिकारियों से लाभान्वित होंगे। समाज में यश, मान, प्रतिष्ठा बनी रहेगी। इस माह यात्राएं तो होंगी पर सार्थकता शंकित है। अपने तथा अपने जीवन साथी के स्वास्थ्य का ध्यान रखे।

कुम्भ–कुम्भ राशि के जातकों के लिये यह माह व्यापार–व्यवसाय की दृष्टि से कुल मिला कर शुभ फल दायक ही कहा जायेगा। कार्य क्षेत्र में प्रगति होगी। नई योजनाओं

का क्रियान्वयन भी संभव है। छोटी–बड़ी यात्राएं भी हो सकती हैं तथा वाहन सुख का लाभ भी मिल सकता है। संतान के विषय में भी कोई शुभ सूचना मिल सकती है। दाम्पत्य जीवन सामान्य रहेगा। समाज में मान–प्रतिष्ठा बनी रहेगी।

मीन–मीन राशि के जातकों के लिये वह माह व्यापार–व्यवसाय की दृष्टि से मिलाजुला फल देने वाला है फिर भी आय से व्यय ही अधिक रहेगा। सरकार में कार्य करने वालों के लिये इस माह का मध्य अच्छा हैं। छोटी बड़ी यात्राएं होंगी जिनसे लाभ रहेगा। इन जातकों का इस माह स्वास्थ्य नरम रहेगा। किंन्ही जातकों को रूका हुआ अपना पैसा मिल सकता है। समाज में मान प्रतिष्ठा बनी रहेगी। वाहन चलाने में सावधान रहें, दुर्घटना हो सकती है।

इति शुभम्

संवेदना समाचार

मासिक पत्रिका रूपरेखा बोले तारें के माध्यम से भविष्यवाणी करने वाले डा. एन.पी.मित्तल जी की माता जी का पिछले सप्ताह स्वर्गवास हो गया। स्नेह की मूर्ति धार्मिक भावनाओं से ओत–प्रोत एवं परंपराओं को निर्वाह करने वाली योग में रूची रखने वाली महिला संकीर्तन मंडल की सदस्यता वेदांत विद्या की गहन चिंतक मिलन स्वभाव वाली तपस्विनी संकुतला देवी सतायु होकर इस नश्वर शरीर का त्याग कर दिया। अपने पीछे भरा पूरा परिवार छोड़ा हैं। पारिवारिक दृष्टि से पुत्र एन.पी. मित्तल, पुत्रवधु रमारानी मित्तल, पुत्री विद्यावती, पौत्र संजय मित्तल, अमित मित्तल, पंकज मित्तल, रूपेस मित्तल, कृष्ण कांत एवं पौत्री मनीषा, ज्योति आदि।

पिछले सप्ताह आपका आश्रम आना हुआ था। और यहां संघप्रवर्तिनी मंजुला श्री महाराज आदि साध्वियों का आशीर्वाद जाने से पहले ही प्राप्त कर लिया था। ऐसा अवसर बहुत कम लोगों को ही प्राप्त होता है। दो दिनो के प्रवास में ही आश्रम के सभी बच्चों का बहुत सारा स्नेह आपको प्राप्त हुआ।

मानव मंदिर मिशन दिवंगत आत्मा की शांति के लिए पभु से प्रार्थना करता है।

राजधानी समाचार

पर्युषण सम्वत्सरी महापर्व की आराधनाः–

परम पूज्या संघ प्रवर्तिनी साध्वी मंजुला श्री जी सरलमना साध्वी श्री मंजुश्री जी महाराज के पावन सान्निध्य में मानव मंदिर केन्द्र के प्रांगण में पर्युषण सम्वत्सरी महापर्व की आराधना बड़ी धूमधाम से की गई। पर्युषण का आठों दिन क्रमशः द्रव्य संयम, वाणी संयम, कषाय विजय, सामायिक दिवस,.....,आठमें दिन सम्वत्सरी महापर्व का इतिहास बताते हुए साध्वी श्री ने फरमाया–पर्व दो प्रकार के होते हैं–लौकिक, लोकोत्तर। लौकिक पर्व का संबंध शरीर के साथ होता है। अर्थात् उस दिन कुछ काम नहीं किया जाता। अच्छे अच्छे पदार्थ और मिष्टान बनाये जाते हैं। लोग उस दिन शारीरिक और मानसिक जितना भी आनंद लूट सकें, उतना लूटते है। पर्युषण पूर्ण आध्यात्मिक पर्व है। यह पर्व आठ दिनतक मनाया जाता है, इसका भी इतिहास है। इतिहास लंबा चोड़ा है। उस इतिहास में हमें जाना नहीं है। हमें तो यह सोचना है कि इन आठ दिनों से हमारा आत्मिक–उत्कर्ष कैसे हो सकता है? इन दिनों में हमारा अधिकाधिक ध्यान आन्तरिक–शुद्धि की ओर होना चाहिए। कषायों को कम करना चाहिए। मोह, माया, आसक्ति को छोड़ना चाहिए, जिससे हमारी आत्मा बाह्य बंधनों से छुटकारा पाकर शाश्वत–सुख को प्राप्त कर सकती है।

पर्युषण पर्व के अंतिम दिन को संवत्सरी कहते हैं। इस दिन प्रायः सभी उपवास करते हैं। इन आठ दिनों में आत्मा को हलका, स्वच्छ निर्मल बना दिया जाता हैं और अंतिम दिन उपवास करके आत्मा एक तरह से निजरूप में रमण करने लगती है। निजरूप का भान होते ही अंतस्थ ईर्ष्या, द्वेष, वैर–भाव पलायन करने लगते हैं। आत्मा उमंग ओर उत्साह से भर जाती है। उसमें सहजता और सरलता आ जाती है। एवं संवत्सरी के दूसरे दिन पारणे से पूर्व ही हमारी आत्मा जिसके साथ वैर है, शत्रुता है और मनमुटाव है उनसे क्षमा मांगने के लिए आतुर हो जाती है। ऐसी क्षमापना में आत्मा की पुकार होती है। इसी कारण से इस दिन को क्षमापना का दिन भी कहते हैं। इस महापर्व में सबसे महत्वपूर्ण था अठाई तप। मानव मंदिर की सबसे छोटी साध्वी पद्म श्री, साधिका प्रीति और श्री सतीष जैन पत्रकार की धर्मपत्नी पूनम जैन का अठाई तप। भयंकर गर्मी के बावजूद इन्होंने इस तप को बड़े अच्छे भावों से पूर्ण किया। अमेरिका में विराजित पूज्य गुरूदेव ने प्रतिदिन सुख पृच्छा की। आपश्री तथा साध्वी श्री के आशीर्वाद से साध्वी श्री तथा छोटी–छोटी बालिकाओं ने बड़े ही उत्साह से यह तप किया। श्री सलेक चंद जी जैन श्री भवंर लाल जी सुराणा आदि

समाज के प्रमुख सभी समागत भाईयों ने तपस्विनी बहनों को आर्शीवाद दिया। श्रीमती मनोरमा बहन, श्रीमती कांता बहिन, श्रीमती क्षमा बहिन। दिल्ली जैन समाज के प्रमुख रिखबचन्द जी जैन की तरफ से समय–समय पर बच्चा के लिए सेवायें मिलती रहती है।

पूज्य गुरूदेव का स्वदेश पधारने पर भव्य स्वागतः–

परम पूज्य गुरूदेव महामनस्वी आचार्य श्री रूपचन्द्र जी महाराज ने अपनी का लंबी विदेश यात्रा पूर्व कर स्वदेश लौटने पर जैन मंदिर आश्रम में भव्य स्वागत किया गया। पूज्या संघ प्रवर्तिनी साध्वी श्री तथा सरलमना साध्वी मंजु श्री जी महाराज के नेतृत्व में सारे धर्म परिवार ने पूज्यबर की इगवानी की। गुरूकुल के बच्चों ने जैन ध्वज लहराते हुए अपने आराध्य का स्वागत किया तथा जयकारों से पूरा वातावरण गुंजा दिया। कलकत्ता से आये श्री जतन लालजी लूनिया, तथा श्री जतन लालजी श्याम सुखा विशाखा पटट्नम से सपरिवार स्वागत किया। श्री आर. के. जैन श्री अरूण तिवारी तथा सौरभ जैन ने एयर पोर्ट पर प्रथम स्वागत किया।

संवेदना समाचार

बरवाला निवासी दिल्ली प्रवासी श्री धर्मपालजी गोयल की तीव्र भावना थी सम्वत्सरी का प्रवचन सुनने की लेकिन वे नहीं सुन पाए क्योकि उनके श्वसुर का उसी मौके पर निधन हो गया। उनकी पत्नी श्रीमती कमलेश रानी की एक पैर की हड्डियां टूटी हुई थी। इसलिए वह लुधियाना नहीं जा सकी। उसके पिता जी श्री राजकुमारी जी लुधियाना की नवलखा कोलोनी में रहते थे। हम लोगों ने आचार्य तुलसी के साथ लुधियाना की नवलखा कोलोनी में चातुर्मास किया तब से कमलेश रानी हमारे संपर्क में आई थी। उस समय उन लड़कियों की पूरी एक टीम थी। शादी के बाद सब अलग–अलग बिखर गई। कमलेश रानी में जितना अपनत्व उस समय था अभी भी वह उसे निभा रही हैं। पूज्य रूपचन्द्र जी महाराज साहब के आश्रम में कोई प्रोगाम, प्रवचन होगा वह सपरिवार जरूर पहुंचती है। कमलेश रानी के अपने पति श्री धर्मपाल जी को इधर की इतनी लगन लगा दी है कि अपना जन्मदिन होगा तो सबसे पहले यहां के गुरूकुल के बच्चों के लिए मिठाई और फल लेकर मंगल–पाठ सुनने जरूर पहुंचेगे। कमलेश रानी के पिता जी श्री राजकुमार जी बंसल बहुत ही सीधे सरल और संतोषी व्यक्ति थे। अभी उनकी उम्र भी कोई ज्यादा नहीं थी लेकिन काल के आगे किसी का वश नहीं। राजकुमार जी की पत्नी और तीनों

बेटियां तथा उनका एक लड़का भाई विवेक सभी शांति से काम लेंगे और दिवंगत आत्मा की सद्‌गति के लिए भावना भाएंगे। यही पूज्य गुरूदेव श्री रूपचन्द्र जी महाराज की प्रेरणा है।

जैन संगम और मानव मंदिर दिवंगत आत्मा की शांति की कामना करते हुए परिवार के प्रति अपनी संवेदना प्रकट करते हैं।

○ श्रीमती तारालक्ष्मी मेहता का देह–विलय ○

राज–कोट श्रीमती तारालक्ष्मी मेहता का देह–विलय पांच सितम्बर को हृदय–गति रूक जाने से हो गया। वे 84 वर्ष की थी।

उनकी स्मृति में मानव मंदिर गुरूकुल, नई दिल्ली में लोगस्स पाठ, नवकार महामंत्र तथा शांति पाठ किया गया, जिसमें उनकी आत्मा की शांति और बंधन मुक्ति के लिए मंगल भावना प्रकट की गई। इस प्रसंग पर पूज्य आचार्यवर ने फरमाया करीब सात–आठ वर्ष पहले न्यूयार्क में ही मनसुख भाई तथा उनकी धर्म–पत्नी श्रीमती ताराबेन से विशेष संपर्क बना। उसमें मैनें पाया कि तारा बैन का जीवन आत्म भावना से ओत प्रोत है, धर्म और भक्ति उनके जीवन व्यवहार से जुड़े हुए थे। हर अनुकूल–प्रतिकूल जीवन–घड़ी में समता और शांति रखना और पूरे परिवार को धर्म के उत्तम संस्कार देना, उनकी विशेषता थी। यही कारण है उनके तीन–पुत्र श्री हरीश भाई, धनराज भाई तथा ज्योतिन्द्र भाई तथा सुपुत्रियां हंसिका बेन तथा रश्मि बेन के जीवन में धर्म–संस्कार कूट–कूट कर भरे हैं।

उल्लेखनीय है श्री मनसुख भाई सदा क्रांतिकारी विचारों के रहे हैं। आज से करीब साठ वर्षों पहले जब तेरापंथी साधु–साध्वियों का सौराष्ट्र विहार हुआ था, उस समय समाज के विरोध के बावजूद श्री मनसुख भाई ने तेरापंथ का खुला समर्थन किया था। आज उनके सुपुत्र श्री धनराज भाई न्यूयार्क में मानव मंदिर मिशन की प्रवृत्तियों को पूरी जिम्मेवारी से सम्हाले हुए हैं तथा हमारे न्यूयार्क–प्रवास में पूरा सेवा–लाभ लेते हैं।

मानव मंदिर मिशन परिवार की ओर से दिवंगत आत्मा को श्रद्धांजलि।

1

–अट्‌ठाई तप पर पूज्या संघप्रवर्तिनी साध्वीश्री मंजुलाश्री जी महाराज से आशीर्वाद प्राप्त कर रही साध्वी पद्‌मश्रीजी, साधिका गरिमा जैन तथा प्रीति जैन।

2

–पूज्या मुंजुश्री जी महाराज से अट्‌ठाई तप का पच्चखाण कर रही साध्वी पद्‌मश्रीजी, साधिका गरिमा जैन तथा प्रीति जैन।

3

–विश्व–विख्यात जल–प्रपात न्याग्रा–फाल्स में नवनिर्मित हिंदू समाज सेंटर में भगवान पार्श्वनाथ और भगवान महावीर की मनोहारी प्रतिमाओं के साथ पूज्य आचार्य श्री।

4

–सिद्धाचलम् तीर्थ, न्यूजर्सी में पूज्य आचार्य श्री के साथ जैन धर्म और दर्शन के जिज्ञासु विश्व विद्यालय का छात्र–समुदाय तथा प्रोफेसर स्टीवेंसन।

5

–न्यूयार्क–पर्युषण महापर्व के अवसर पर मंच पर पूज्य आचार्यवर के साथ आसीन हैं अमेरिका जैन समाज के लोकप्रिय नेता श्री चित्रभानुजी।

6

–न्यूयार्क जैन सेंटर में पूज्य आचार्य श्री जी रूपचंद जी महाराज के सान्निध्य में पर्युषण पर्व का आनंद लेते हुए विशाल जन–समूह की एक झलक। इस महापर्व पर न्यूयार्क–जैन–समाज–में 80 से ऊपर अट्ठाई, तप तथा पन्द्रह, सोलह, दिनों का तप एवं एक मासखमण तप हुए।